Aayushi International Interdisciplinary Research Journal (AIIRJ)

VOL- X | ISSUE- II | FEBRUARY | 2023 | PEER REVIEW e-JOURNAL | IMPACT FACTOR 7.367 | ISSN 2349-638x

'पचपन खम्भे लाल दीवारें' उपन्यास में मध्यवर्गीय कामकाजी नारी जीवन की त्रासदी

पूनम पाधा
पीएच.डी. शोधार्थी, हिन्दी विभाग
जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू—180006
ईमेल : p.padha94@gmail.com

'पचपन खम्भे लाल दीवारें' उषा प्रियवंदा का पहला उपन्यास है। यह उपन्यास सन् 1961 ई. में प्रकाशित हुआ है। नारी के अजनबीपन की भावना, उससे उत्पन्न ऊब, विफलता, संत्रास और अेकेलपन की अनुभूति का कलात्मक ढंग से वर्णन इसमें किया गया है। यह एक नायिका प्रधान उपन्यास है, जिसमें एक शिक्षित, समझदार, आत्मनिर्भर तथा जिम्मेदार पद पर कार्यरत नारी की कहानी है। लेकिन पारिवारिक जिम्मेदारियों एवं सामाजिक मर्यादाओं के बोझ तले उसके युवावस्था के मधुर स्वप्न अंकुरित होते ही मुरझा जाते हैं। सुषमा के माध्यम से लेखिका ने एक भारतीय नारी की सामाजिक—आर्थिक विवशताओं से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है।

सुषमा एम.ए. करने के पश्चात् एक कॉलेज के इतिहास विभाग में प्राध्यापिका के पद पर नियुक्त हो जाती है। वह बहुत परिश्रमी और ईमानदार है। अपने काम और व्यवहार के कारण उसे अपने कॉलेज में वार्डन के पद पर नियुक्त किया जाता है, किंतु अकेलेपन की अनुभूति उसे व्यथित करती है।

जिन परिवारों में घर के मुखिया नौकरी से सेवामुक्त हो जाएं या किसी बिमारी के कारण नौकरी न कर सकें, वहां आर्थिक संकट और भी गहरा हो जाता है। ऐसी स्थिति में परिवार के बड़े लड़के या लड़की को ज़िम्मेदारी निभानी पड़ती है। 'पचपन खम्भे लाल दीवारें' की सुषमा अपने पिता के पक्षाघात से पीड़ित होने के कारण पारिवारिक उत्तरदायित्वों को निभाने के लिए तथा अपने छोटे भाई—बहनों के भविष्य को उज्जवल बनाने के लिए अपना जीवन समर्पित कर देती है। जब सुषमा की मौसी उसे शाादी करने के लिए कहते हैं तो सुषमा उन्हें कहती है कि—

''इन सबको भी तो मदद की जरूरत है मौसी। पिता जी को पेन्शन मिलती ही कितनी है? उसमें तो दो वक्त दाल—रोटी भी न चले। मैं भी अगर न करूँ तो किसके आगे हाथ फैलायेंगे?''[प]

कमाऊ बेटी जब परिवार के पालन—पोषण का दायित्व अपने कंधों पर लेकर पुत्र की भूमिका में उतरती है तो माता—पिता प्रायः स्वार्थी हो जाते हैं। उपन्यास में सुषमा की माँ सुषमा की शादी के लिए चिंतित नहीं है। वह अपनी छोटी बेटी नीरू के विवाह को लेकर चिंतित है। जब भी कोई सुषमा की शादी के बारे में पूछता है, तो ऐसे अवसरों पर उसकी माँ सारा दोष सुषमा के सिर पर डालती है। सुषमा की माँ जब अपनी छोटी बेटी नीरू की शादी की बात करती है तो कृष्णा मौसी आश्चर्य से कहती है कि—

''तो क्या दीदी, सुषमा को कुँआरी रखोगी? इसका ब्याह नहीं करोगी जो अभी से नीरू के लिए दहेज जोड़ने लगी।''[पप] तभी सुषमा की माँ कहती है कि ''तुम जानो कृष्णा,

सुषमा की शादी तो अब हमारे बस की बात रही नहीं। इतना पढ़—लिख गयी, अच्छी नौकरी है और अब तो क्या कहने हैं, होस्टल की वार्डन भी बनने वाली है। बंगला और चपरासी अलग से मिलेगा, बताओ, इसके जोड़ का लड़का मिलना तो मुश्किल ही है।’’[पपप]

सुषमा को लगता है कि वह पैसे कमाने की मशीन मात्र बनकर रह गई है। यह अहसास सुषमा के भीतर पीड़ा की सृष्टि करता है।

पारिवारिक आर्थिक अभाव से त्रस्त होकर लड़कियाँ अपने आत्म जीवन के बारे में विचार न करके अपनी इच्छाओं को परिवार पर न्यौछावर कर देती हैं। उपन्यास में सुषमा को अपने परिवार की आर्थिक स्थिति का अंदाजा है। जब मौसी सुषमा को अपनी जिंदगी के बारे में सोचने को कहती है तब सुषमा कहती है कि—

‘‘मैं जो करती हूँ, कर्त्तव्य समझकर नहीं मौसी, उनके प्यार में करती हूँ। मेरा तो मन होता है कि मेरे पास अगर और कुछ होता तो और भी करती... अपने लिए तो सभी करते हैं, छोटे भाई—बहनों का कुछ कर सकूँ, उस योग्य भी तो पिताजी ने ही बनाया है।’’[पअ]

सुषमा के ये विचार सिद्ध करते हैं कि अपने परिवार के प्रति कर्त्तव्य को वह भलि—भांति समझती है और उसके लिए उसने अपनी जिंदगी हँसते—हँसते न्यौछावर कर दी। वह पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास करती है। वह जानती है कि अगर वह परिवार का पहला पुत्र होती तो भी उसे ही सब कुछ करना पड़ता।

भारतीय परिवारों में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं जहाँ कामकाजी लड़कियाँ माता—पिता व भाई—बहनों का लालन—पालन करती है। विवाह योग्य उनकी आयु व्यतीत हो जाती है। वे एकांकी जीवनयापन करने को विवश हो जाती है और इच्छा होते हुए भी जिम्मेदारियों के कारण वे अपने प्रेमी को छोड़ने पर विवश हो जाती है। उपन्यास में सुषमा के जीवन में जब नील का आगमन होता है तो सुषमा का एकांकी जीवन नील का प्रेम और आत्मीयता पाकर पुलकित हो उठता है। लेकिन पारिवारिक उत्तरदायित्वों के बोझ से दबी सुषमा नील से प्रेम करने के बावजूद भी यह कहने को विवश हो उठती है— ‘‘मेरी बहुत जिम्मेदारियाँ हैं। तुमसे तो कुछ भी छिपा नहीं है। पक्षाघात से पीड़ित बाबू, दो बहनें और भाई, सब मुझे ही करना है...।’’[अ]

सुषमा अपने व्यवसाय में कुशल है। होस्टल की वार्डन होने के नाते सुषमा अनुशासन रखती है। सुषमा के वार्डन बनने के कारण उसकी सहअध्यापिकाएँ उससे जलती हैं। सुषमा के प्रेम—प्रसंग को हथियार बनाकर वे उसे बर्बाद कर देना चाहती हैं। अतः योजनाबद्ध रूप से षड्यंत्र की रूपरेखा बनायी जाती है और सुषमा को नील के साथ रंगे हाथों पकड़ लिया जाता है।

सुषमा के व्यक्तित्व में आधुनिक जीवन का अकेलापन, घुटन, ऊब और भविष्य के प्रति अनिश्चितता की भावना दिखाई देती है। उसके जीवन की परिस्थितियाँ एक ऐसा चक्रव्यूह हैं जिसमें से वह चाहकर भी बाहर नहीं निकल सकती। नील ने ही सुषमा के नीरस जीवन में सौन्दर्य, प्रेम, पारस्परिक आकर्षण और संतुष्टि का बोध कराया था। नील के जीवन में आ जाने से सुषमा अपने मन में बहुत अधिक बदलाव महसूस करती है। सामाजिक और आर्थिक विवशता के कारण सुषमा को नील से संबंध विच्छेद करना पड़ रहा था जिस कारण वह अंदर तक टूट गई थी—

‘‘नील के बगैर मैं कुछ भी नहीं हूँ, केवल एक छाया, एक खोये हुए स्वर की प्रतिध्वनि और अब ऐसी ही रहूँगी, मन की वीरानियों में भटकती हुई।’’[अप]

नील से अलग होने पर ही उसे अहसास होता है कि वह मन से उसके साथ कितनी गहराई से जुड़ी हुई थी। चाहकर भी वह उसे पा

नहीं सकती थी और बिछुड़कर भी वह उसे भूल नहीं सकती थी। सुषमा एक विवेक सम्पन्न, सहृदय और संवेदनशील नारी है जो अपनी पारिवारिक प्रतिबद्धता के कारण अपनी इच्छाओं का दमन करती रही है। अपने वैयक्तिक सुख के लिए अपने परिवार को निराधार छोड़ने का साहस सुषमा जुटा नहीं पाती। समझोते की कोशिश में अपनी सभी कोमल भावनाओं को हृदय की गहराईयों में दफनाकर आत्म निवार्सित बन जाती है। अपनी सभी आकांक्षाओं और कामनाओं से मुँह मोड़कर अपने आप में गुम होकर रह जाती है, क्योंकि नील के बिना उसका जीवन अधूरा है। इस प्रकार अपने पिता की जिम्मेदारियाँ निभाने के लिए सुषमा को अपनी भावनाओं की निर्मम आहुति देनी पड़ती है, अपने आप को होम करना पड़ता है। विवाह करके परिवार को निराधार छोड़ना उसे सम्भव नहीं जान पड़ता। अत: वह न तो प्रिंसीपल को नाराज़ करने की स्थिति में है और न प्रेमी नील के विवाह प्रस्ताव को स्वीकार करने की स्थिति में। वह अपनी दृष्टि अगले साल मिलने वाले सिनियर ग्रेड पर केंद्रित करने को बाध्य है। इसलिए पचपन खम्भे लाल दीवारों वाले उस कॉलेज को वह छोड़ नहीं सकती। यह उसका बंदीगृह है और नियति भी।

अंतत: कहा जा सकता है कि ‘पचपन खंभे लाल दीवारें’ उपन्यास में लेखिका ने सुषमा के माध्यम से मध्यवर्गीय नारी की सामाजिक—आर्थिक विवशताओं से जन्मी मानसिक यंत्रणा का बड़ा ही मार्मिक चित्रण किया है। छात्रावास के पचपन खंभे और लाल दीवारें उन परिस्थितियों के प्रतीक हैं जिनमें रहकर सुषमा को ऊब तथा घुटन का तीखा एहसास होता है लेकिन फिर भी वह उससे मुक्त नहीं हो पाती। शायद होना नहीं चाहती, उन परिस्थितियों के बीच जीना ही उसकी नियति है। आधुनिक जीवन की यह एक बड़ी बिडंबना है कि जो हम नहीं चाहते वही करने को विवश हैं। लेखिका ने इस स्थिति को बड़े ही कलात्मक ढंग से प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित किया है।

संदर्भ :—

---

[i] उषा प्रियवंदा, पचपन खम्भे लाल दीवारें, पृ. 10

[ii] वही, पृ. 9

[iii] वही, पृ. 9

[iv] वही, पृ. 10

[v] वही, पृ. 100

[vi] वही, पृ. 107